वर्ष 25, अंक 9 Sr. 436, मुंबई, सितंबर 2026, पन्ने 24 कीमत रु. 5/-

।। श्रीमद् प्रेम-रामचन्द्र-भद्रंकर-महोदय-पुण्यपाल-वज्रसेन-हेमभूषणसूरिभ्यो नमः ।।

बीसवीं सदी के महान् योगी पू. पंन्यास प्रवर श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य एवं उन्हीं के कृपापात्र चरम शिष्यरत्न जैन हिन्दी साहित्य दिवाकर पू. आचार्यदेव श्रीमद् विजय रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा. के चिंतनों को प्रसारित करने वाला मुखपत्र

अर्हद् दिव्य-संदेश

अर्हद् दिव्य-संदेश

"अर्हद् भाषितं शुद्धे, दिव्यं देवैरपि स्तुतम् । सन्देशः शोभते सम्यक्, मासिकः पुण्यवर्धकः ।।"

सर्व विरति स्वर्ण वर्ष
२०३३-२०८३
आचार्य श्री रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.

पू.आ. श्री रामचन्द्रसूरिजी स्वर्गारोहण तिथि निमित्त 'समाधिपर्व'

वर्धमान शक्रस्तव

समाधि मरण भावयात्रा

पुस्तक विमोचन

गुणानुवाद सभा

संपादक एवं प्रकाशक :-

सुरेन्द्र जैन, C/o. दिव्य संदेश प्रकाशन, Office No. 304, 3rd Floor,
बे व्यु बिल्डींग, विंग-ईस्ट बे, डॉ. एम.बी. वेलकर स्ट्रीट, कालबादेवी,
मुंबई-400 002. M. 84 84 84 84 51

Correspondance Whatsapp only, Website : divyasandesh.store

।। शत्रुंजय तीर्थाधिपति श्री आदिनाथाय नमो नमः ।।

।। श्रीमद् दान-प्रेम-रामचन्द्र-भद्रंकर-महोदय-पुण्यपाल-वज्रसेन-हेमभूषण सूरिभ्यो नमः ।।

शाश्वत गिरिराज श्री शत्रुंजय महातीर्थ की गोद में, भद्रंकर परिवार-मुंबई द्वारा आयोजित

गिरि-गुरु भद्रंकर उपधान तपोत्सव

-: दिव्य कृपावर्षा :-

परम शासन प्रभावक, महाराष्ट्र देशोद्धारक परम पूज्य आचार्यदेव श्रीमद् विजय रामचंद्रसूरीश्वरजी म.सा.

नमस्कार महामंत्र के बेजोड साधक, बीसवीं सदी के महान योगी, पंन्यास प्रवर श्री भद्रंकरविजयजी म.सा.

वात्सल्यमूर्ति, हालार रत्न पूज्यपाद पंन्यास प्रवर श्री वज्रसेनविजयजी म.सा.

-: पावनकारी शुभनिश्रा :-

मरुधर रत्न, सरस्वती नंदन, जैन हिन्दी साहित्य दिवाकर, पूज्यपाद आचार्यदेव

श्रीमद् विजय रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा. आदि साधु-साध्वीवृंद

-: शुभारंभ :-

आसो सुदी-10, वि.सं. 2083,
दशहरा, रविवार दि. 10-10-2027

-: शुभस्थल :-

कस्तुरधाम-नीलम विहार धर्मशाला
तलेटी रोड, पालिताणा

-: मोक्षमाला :-

मारवाडी मगसिर वदी-14, वि.सं. 2084,
शनिवार दि. 27-11-2027

-: आवेदन-पत्र प्राप्ति हेतु संपर्क सूत्र :-

1) रणजीतभाई राठोड-बोरीवली, 5-B, पार्श्व दर्शन, चंदावर्कर लेन, बोरीवली (W). मुंबई-92. मो. 98190 79966

2) ललितभाई राठोड, C/o. चंदन एजेन्सी, 607, चीराबाजार, मुंबई-400 002 मो. 98203 03451

3) किरणभाई चोपडा-निगडी मो. 86001 00765

4) भरतभाई कोठारी-बान्द्रा मो. 98206 84775

5) भरतभाई छाजेड-बोरीवली, मो. 98205 57134

6) प्रकाशभाई बडोल्ला, 52, 3rd Cross, शंकरमट रोड, बेंगलोर, मो. 89712 30600

7) चेतनभाई मेहता-बोरीवली मो. 98670 58940

8) सहदेवभाई मो. 98672 04942

रत्न संदेश

लेखक :-

प्रवचन प्रभावक पूज्य आचार्यदेव श्रीमद् विजय
रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.

537 **व्यवहार**

दुनिया में दो तरह के लोग होते हैं–
एक वे जो जहाँ जाते हैं,
लोग खुश हो जाते हैं ।
उनका आगमन आनंददायी बनता है,
जब कि कुछ लोग ऐसे होते हैं,
जिनके आगमन के साथ ही खुशियों का
बाग मुर्झा जाता है, वातावरण में
उदासीनता छा जाती है । लोग सोचते हैं,
''यह कब जाय ?''

538 **वाणी**

बर्तन की आवाज पर से मालूम पडता है कि
वर्तन अखंड है या टूटा हुआ है ।
आदमी की वाणी से पता चलता है कि
वह उत्तम है या अधम है ?
हमारी वाणी हमारे जीवन का,
हमारे चरित्र का परिचायक बनती है ।
मीठी और मधुरी वाणी सज्जनता की
और कटु व कर्कश वाणी
दुर्जनता की निशानी है ।

जनवरी 2026 से दिसंबर 2026 तक दिव्यसंदेश मासिक के वार्षिक सहयोगी

मुख्य-सहयोगी

- **एक सद्गृहस्थ-**कांदिवली-बाली

सहयोगी

- **मातुश्री शांतिबेन पुखराजजी उमाजी करमाजी भंदर-**शांतिकमल-मुंबई
- **स्व. बदामीबाई चम्पालालजी राठोड़ (हस्ते राकेशभाई)** बाली, ईरोड़
- **मुनि स्थूलभद्रविजयजी** की प्रेरणा से **अ.सौ.मंजुला हसमुखलालजी महेता** मुंडारा-बोरीवली
- **ओटीबाई वालचंदजी, चाहत विनीतजी बोकरिया** विक्रोली (वे), खिमेल (राज.)

पूज्यश्री से पत्र सम्पर्क : प.पू. आचार्य श्रीमद् विजय **रत्नसेनसूरीश्वरजी** म.सा.
C/o. कल्याणजी सौभागचंदजी जैन पेढी, प्रेमसूरि आराधना भवन, पिंडवाडा-307 002.
स्टे. पिंडवाडा (राज.) संपर्क सूत्र : सहदेव 98672 04942

ऐसे थे गुरुदेव हमारे

बीसवीं सदी के महान योगी, नमस्कार महामंत्र के अजोड साधक,
निःस्पृह शिरोमणि, प्रशांतमूर्ति पूज्यपाद पंन्यास प्रवर
श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य

संपादक : जैन हिन्दी साहित्य दिवाकर पूज्य आचार्यदेव
श्रीमद् विजय रत्नसेनसूरीश्वरजी महाराज

9 शासन के शणगार पूज्य गुरुदेवश्री

लेखक : - पू. आचार्यश्री रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.

आत्म-तत्त्व के ज्ञाता गुरुवर, योग-मार्ग के प्रेरक थे ।
महामंत्र के ध्याता गुरुवर, मैत्री भाव से वासित थे ।
युगद्रष्टा भद्रंकर गुरुवर, आत्म-गुणों के साधक थे ।
भक्ति-भाव से आप चरण में, कोटि-कोटि: वंदन हो ।।

ध्यानयोग और अध्यात्म के महान् साधक, अमाप करूणा-वत्सल, महामंत्र के परम प्रभावक, विश्ववंद्य, **पूज्यपाद गुरुदेव पंन्यासप्रवर श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्यश्री** के स्वर्ग-गमन से जैनशासन को एक महान् अध्यात्मयोगी महापुरुष की क्षति पहुँची हैं । जैनशासन के शणगार पूज्य गुरुदेवश्री त्याग-वैराग्य-निःस्पृहता तथा प्रशम भाव आदि अनेकानेक गुणरत्नों के आकर थे । उनके गुणों को लेखनीबद्ध करना मुट्ठी से पर्वत तोड़ने जैसी मेरी बालचेष्टा ही है, फिर भी पूज्यपाद गुरुदेवश्री के प्रति अन्तःकरण में रही हुई भक्ति ही मुझे कुछ लिखने के लिए प्रेरित करती है ।

संवत् 2030 में पूज्यपाद गुरुदेवश्री के शिष्यरत्न विद्वद्वर्य **मुनिप्रवर श्री कुन्दकुन्दविजयजी म. सा.** आदि का बाली (राज.) में चातुर्मास हुआ । चातुर्मास के बाद कार्तिक पूर्णिमा के दिन **पूज्य मुनिराजश्री कुन्दकुन्दविजयजी म.सा.** आदि के साथ विहार कर लुणावा जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ और वहाँ बिराजमान प्रशमरस में निमग्न-करुणावत्सल पूज्यपाद गुरुदेवश्री के प्रथमबार दर्शन-वन्दन का सद्भाग्य प्राप्त हुआ । प्रथम ही परिचय में पूज्यपाद गुरुदेवश्री की अमृतमय वाणी ने मुझे मंत्रमुग्ध बना दिया ।

उसके बाद मुच्छाला-महावीरजी में सामुदायिक ओली की विशिष्ट आराधना की समाप्ति के बाद पूज्यपाद गुरुदेवश्री घाणेराव पधारे । वहाँ पुनः पूज्यपाद गुरुदेवश्री के दर्शन-वन्दन का सौभाग्य प्राप्त हुआ और वहीं पर पूज्यपाद गुरुदेवश्री की सत्प्रेरण से संयम-मार्ग के पथिक बनने की अभिलाषा हुई । उसके बाद संवत् 2031 के मुंडारा चातुर्मास दरम्यान पूज्यपादश्री की पावन प्रेरणा से आत्मबल मजबूत हुआ, 2031 और 2032 के क्रमशः बेड़ा और लुणावा के चातुर्मास दरम्यान पूज्यपादश्री के सान्निध्य में रहने का सद्भाग्य प्राप्त हुआ । अन्त में संवत् 2033 में पूज्यपादश्री के आशीर्वाद से संयममार्ग के पथिक बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ ।

इस प्रकार 5 वर्ष की अल्पावधि में पूज्यपाद गुरुदेवश्री के जीवन में मुझे जिन-जिन गुणों का यत्किंचित् साक्षात्कार हुआ, उनमें से कुछ गुणों के वर्णन के लिए अंतःकरण प्रेरित कर रहा है ।

पूज्यपाद गुरुदेवश्री के जीवन की संक्षिप्त झाँकी इस प्रकार है–

जन्म–मार्गशीर्ष सुद-3, वि.संवत् 1959, दि. 02-12-1902, मंगलवार ।

जन्म-स्थल–फोफलियावाड़ा-पाटण (उ.गु.)

पिता का नाम–हालाभाई मगनभाई **माता का नाम–**चुन्नीबाई

जन्म-नाम–भगवानदासभाई **भाई–**वीरचंदभाई, लहेरुभाई, भोगीलाल

बहन– मेनाबहन **व्यावहारिक अभ्यास–**15 वर्ष में मैट्रिक, इन्टर

धार्मिक संस्कार–माता-पिता सुसंस्कृत होने से सुसंस्कारों का सिंचन । बाल्यवय से प्रभु-पूजा में राग; रात्रि-भोजन, कंदमूल, अभक्ष्य आदि का त्याग ।

धार्मिक-अभ्यास–छोटी वय से धार्मिक-अभ्यास प्रारम्भ । तीव्र स्मरण शक्ति के कारण 12 वर्ष की छोटी वय में पंच-प्रतिक्रमणादि सूत्र और योगशास्त्र के 4 प्रकाश कण्ठस्थ । 125, 150 व 350 गाथा के स्तवन कण्ठस्थ ।

वैराग्य भावना–यौवन के प्रांगण में प्रवेश से ही विरक्तता । तत्कालीन **पूज्य मुनिश्री रामविजयजी म. सा.** (बाद में आचार्यदेवश्री) के प्रवचन-श्रवण से वैराग्य पुष्टि ।

धार्मिक-जीवन–ज्ञान के साथ क्रिया का सुमेल । **'नवपद आराधक समाज'** की स्थापना में अग्रेसर । नवपद के परम आराधक । एक बार नियमित छह मास तक आयंबिल किया । वि.संवत् 1980 में अट्ठाई तप की आराधना । वि.सं. 1981 में कुंभार टुकडा-मुंबई में आयंबिल खाता की स्थापना में अग्रणी । वर्धमान तप की 52 ओलियाँ ।

1 वर्ष तक-जैन प्रवचन साप्ताहिक का संपादन ।

दीक्षा-ग्रहण–कार्तिक वद 3, संवत् 1987 भायखला (मुम्बई) । दिनांक 09-11-1930

दीक्षा-दाता–सकलागमरहस्यवेदी **आचार्यदेव श्री दानसूरीश्वरजी म.सा.** ।

गुरुदेवश्री–परम पूज्य पंन्यासश्री रामविजयजी गणिवर्य ।

नामकरण–मुनिश्री भद्रंकरविजयजी ।

सह-दीक्षित–मुनिश्री मलयविजयजी, मुनिश्री वल्लभविजयजी, मुनिश्री हंसविजयजी और मुनिश्री हंससागरजी म. ।

उसी दिन–परम पूज्य अनुयोगाचार्य पंन्यासश्री प्रेमविजयजी म. को **उपाध्याय पदवी** और परम पूज्य व्याख्यान वाचस्पति **मुनिश्री रामविजयजी म.सा.** को **गणि** एवं **पंन्यास पदवी** प्रदान की गई ।

शास्त्र-अध्ययन–पूज्य आचार्यश्री हरिभद्रसूरीश्वरजी म. तथा **पूज्य न्यायाचार्य उपाध्यायश्री यशोविजयजी म.** के अनेकानेक ग्रन्थों का सूक्ष्मता से वाचन, मनन और चिन्तन । षड्दर्शन-अध्यात्म और योग के स्वपर-दर्शन के शास्त्रों का गहनता से अभ्यास । आगम-ग्रन्थों और पूर्वाचार्य कृत अनेकानेक ग्रन्थों का गहन-अभ्यास ।

बाह्य व अभ्यन्तर तप–वर्धमान तप की 52 ओली । दीक्षा के बाद वर्षों तक नित्य एकासना । स्वाध्याय, ध्यान और कायोत्सर्ग की अपूर्व-साधना ।

अनुप्रेक्षा–नमस्कार-महामंत्र, लोगस्स सूत्र और उवसग्गहरं स्तोत्र के महान् अनुप्रेक्षक।

चिन्तन विषय–नमस्कार-महामंत्र, मैत्री आदि भावना, यति-धर्म, अष्ट प्रवचन-माता, मुक्ति और मुक्ति-मार्ग आदि विषयों के महान् चिन्तक और लेखक।

शिष्य परिवार–स्वयं के 21 शिष्य और कुल परिवार 130 लगभग।

पंन्यास पदवी–महासुद 12, संवत् 2007-पालीताणा। दि. 18-12-1951

विहार क्षेत्र–मारवाड़, गुजरात, काठियावाड़ (सौराष्ट्र) हालार, अहमदाबाद, मुम्बई, महाराष्ट्र तथा कर्णाटक के अनेक क्षेत्र आदि।

शारीरिक लक्षण–सौम्य व प्रशान्त मुख-मुद्रा, विशाल भाल, गौर-वर्ण, लगभग जानुपर्यंत हाथ, मुख पर ब्रह्मचर्य का महान् तेज, लक्षणोपेत आकर्षक और प्रभावक मुख-मुद्रा।

अशाता का उदय–वर्षों से किसी–न–किसी रोग का हमला। पिछले तीन वर्षों में अशाता का तीव्र उदय।

साधना–नमस्कार-महामंत्र का ध्यान, नवपद आदि के उत्कृष्ट साधक।

समाधि–भयंकर अशाता के उदय में भी अजब-गजब की समाधि।

अन्तिम चातुर्मास–स्वगुरुदेव व्याख्यान-वाचस्पति **आचार्यदेव श्रीमद् विजय रामचन्द्रसूरीश्वरजी म.** के साथ पाटण में।

समाधि-मृत्यु–वैशाख सुद-14, संवत् 2036, दि. 29-4-1980, मंगलवार की रात्रि में आठ बजकर दस मिनट पर। नगीनभाई पौषधशाला-पाटण (उ.गु.)।

संयम पर्याय – 49 वर्ष।

आन्तरिक-वैभव

1. **सौम्य व प्रशान्त मुख-मुद्रा**–पूज्यपाद गुरुदेवश्री की यह मुख्य विशेषता थी–कषायों का त्याग। ऐसे तो बाल्यवय से ही उनकी शान्त और सौम्य प्रकृति थी, परन्तु वर्षों की साधना के बाद में उनके मुख पर अपूर्व सौम्यभाव और प्रशान्तता विराजती थी, कि जिनके दर्शन मात्र से ही दर्शक के हृदय में अपूर्व आनन्द का अनुभव होता था। क्षमा की साधना से उन्होंने क्रोध का प्रतिकार किया था, नम्रता के वज्र से उन्होंने मान के पर्वत को भेद डाला था, सरलता से माया और सन्तोष से लोभ का नाश कर दिया था।

2. **अत्यन्त निःस्पृहता**–उनके जीवन में असाधारण निःस्पृहता थी। बाह्य-आडम्बरों से उनका जीवन परे था। आचार्य-पद के योग्य आन्तरिक वैभव के स्वामी होने पर भी गुर्वाज्ञा और अनेक संघों की आग्रहभरी विनंति होने पर भी उन्होंने **'आचार्य-पदवी'** को ग्रहण नहीं किया था।

जीवन-व्यवहार में व्यक्ति की पहिचान के लिए **'नामधारी'** होने पर भी अपने नाम की ममता से वे अत्यन्त परे थे। वे अनेक बार कहते थे कि **'नाम'** यह तो व्यक्ति की पहिचान के लिए है और उसका सम्बन्ध देह से है। अपनी आत्मा तो नामातीत है। इस अनन्त संसार में अनन्त भवों में अनन्त नाम अपने हुए हैं। गत भवों के नामों की अब कोई कीमत नहीं है। अतः नामातीत आत्मा के गुणों के विकास के लिए प्रयत्नशील बनना चाहिये, परन्तु नाम के मान-अपमान में नहीं पड़ना चाहिये। स्व-नाम की निःस्पृहता के एक-दो प्रसंग याद आ रह हैं। **(क्रमशः)**

महावीर प्रभु की पट्टधर-परंपरा

-: लेखक :-

पूज्य आचार्यदेव श्रीमद् विजय
रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.

लब्धि निधान श्री गौतमस्वामी

शंका-समाधान

परिजूरई ते सरीरयं, केसा पंडुरया भवंति ते ।
से सोयबले य हायइ, समयं गोयम ! मा पमायए ।।

अर्थ : तेरा शरीर क्षीण हो रहा है, तेरे केश सफेद हो रहे हैं और कान का बल क्षीण हो रहा है । अतः हे गौतम ! एक समय का भी प्रमाद मत करना ।

वोच्छिंदे सिणेहमप्पणे, कुमुयं सारईयं व पाणियं ।
से सव्व सिणेहवज्जिए, समयं गोयम ! मा पमायए ।।

अर्थ : शरद ऋतु का कुमुद पानी को दूर करता है, उसी प्रकार तू अपनी आसक्ति को दूर कर ! इस प्रकार सभी प्रकार की आसक्ति को दूर हटा । हे गौतम ! इस कार्य में एक समय का भी प्रमाद मत करना ।

तिण्णो हु सि अन्नवं महं किं पुण चिट्ठसि तीरमागओ ।
अभितुरं पारं गमित्तए, समयं गोयम ! मा पमायए ।।

अर्थ : महासागर को पार करने के बाद अब किनारे आकर क्यों खड़ा है ? अब पार पाने के लिए जल्दी कर । हे गौतम ! एक समय का भी प्रमाद करना हितकारी नहीं है ।

केशी गणधर

एक बार श्री गौतम स्वामी भगवन्त अपने परिवार के साथ विहार करते हुए श्रावस्ती नगरी के कोष्ठक उद्यान में पधारे । उसी समय पार्श्वनाथ प्रभु की परंपरा के श्रमण केशीकुमार भी अपने परिवार के साथ श्रावस्ती नगरे के तिंदुक उद्यान में पधारे हुए थे ।

भगवान पार्श्वनाथ और महावीर स्वामी के निर्वाण के बीच 250 वर्ष का अन्तर था। महावीर प्रभु के अस्तित्वकाल में भगवान पार्श्वनाथ की श्रमण परम्परा विद्यमान थी। यद्यपि दोनों श्रमण परम्परा का मूलभूत उद्देश्य एक होने पर भी दोनों की आचार-संहिता में थोड़ा सा अंतर था।

उस समय गौतम स्वामी और केशी कुमार के श्रमणों ने परस्पर एक दूसरे को देखा और उनके मन में शंकाएं पैदा हुई कि समान लक्ष्य होने पर भी महाव्रत की संख्या, श्वेत व रंगीन वस्त्र, सचेलक व अचेलकपना आदि में भेद क्यों दिखाई दे रहा है ? अपने शिष्यों की शंकाओं के निवारण के लिए केशीकुमार व इन्द्रभूति गौतम ने परस्पर मिलने का निश्चय किया।

गौतम स्वामी केशीकुमार से वय में छोटे थे परन्तु ज्ञान में बड़े थे। केशीकुमार तीन ज्ञान के धारक थे और पार्श्व परम्परा के तत्कालीन नायक थे। गौतम स्वामी चार ज्ञान के धारक, प्रभु महावीर के प्रथम शिष्य व प्रथम गणधर थे।

गौतम स्वामी का स्थान बड़ा होने पर भी वे नम्रता की साक्षात् मूर्ति थे। अतः वे स्वयं अपने शिष्यों के साथ केशीकुमार को मिलने के लिए तिंदुकवन में पधारें। उनके आगमन को देख केशीकुमार प्रसन्न हो गए। उन्होंने गौतम स्वामी का हार्दिक स्वागत किया।

अन्य औपचारिक विधि की समाप्ति के बाद केशीकुमार ने प्रश्न करते हुए कहा, **'महाभाग ! भगवान पार्श्वनाथ ने चार महाव्रतों का उपदेश दिया, जबकि भगवान महावीर ने पांच महाव्रत बतलाए। 'निर्ग्रंथ मार्ग' समान होने पर भी इस परिवर्तन का क्या कारण ?'**

गौतम स्वामी ने केशीकुमार की शंका का समाधान करते हुए कहा, 'दोनों परंपरा का लक्ष्य समान होने पर भी काल भेद से ही यह परिवर्तन किया गया है। प्रथम तीर्थपति श्री ऋषभदेव प्रभु के शासन के मुनि ऋजु और जड होते हैं। बीच के बाईस तीर्थंकरों के मुनि ऋजु व प्राज्ञ होते हैं। तथा महावीर स्वामी के शासन के मुनि वक्र व जड प्रकृति के हैं प्रथम तीर्थंकर के मुनियों को मार्ग का बोध कठिन होता हैं, जबकि पालन सुकर होता हैं। बाईस तीर्थंकरों के मुनियों को बोध व पालन दोनों सुकर होते हैं, जबकि महावीर स्वामी के मुनियों को बोध व पालन दोनों दुष्कर हैं।

ऋतु व प्राज्ञ होने के कारण भगवान पार्श्वनाथ के साधु अपरिग्रह महाव्रत के अन्तर्गत ही चौथे ब्रह्मचर्य व्रत का समावेश कर लेते थें, क्योंकि वे समझ सकते थें कि स्त्री भी एक परिग्रह है। परन्तु भगवान महावीर के साधु वक्र और जड होने के कारण ही उनके हित के लिए भगवान् महावीर ने चौथा ब्रह्मचर्य महाव्रत अलग से बतलाया है। इस प्रकार बाह्य दृष्टि से चार और पांच महाव्रतों में संख्या भेद दिखाई देने पर भी तात्त्विक दृष्टि से कोई भेद नहीं है।

प्रश्न का समाधान पाकर केशीकुमार मुनि प्रसन्न हो गए। उन्होंने दूसरा प्रश्न किया, **'भगवान् पार्श्वनाथ के साधुओं के लिए रंगीन वस्त्र, मूल्यवान् वस्त्र आदि की छूट दी गई, जबकि महावीर स्वामी के साधुओं के लिए जीर्ण-शीर्ण, अल्प मूल्य वाले और श्वेत वस्त्रों का विधान क्यों ?'**

गौतम स्वामी ने कहा, `इस विधान के पीछे भी पूर्वोक्त कारण ही रहा हुआ है। पार्श्वनाथ संतानीय साधु ऋजु व प्राज्ञ होने के कारण वे मूल्यवान् वस्त्रों के उपभोग में भी अनासक्त रह सकते थें, जबकि महावीर स्वामी के साधु वक्र व जड़ होने से आसक्ति की संभावना होने के कारण उनके लिए रंगीन, कीमती व उत्तम वस्त्रों के उपयोग का निषेध किया गया है।

केशीकुमार बोले, `महाभाग ! आप हजारों शत्रुओं के बीच खड़े है। वे शत्रु आपको परास्त करने के लिए तत्पर हैं, फिर भी आपने उन शत्रुओं को कैसे जीत लिया ?'

गौतम स्वामी ने कहा, `जब मैंने एक शत्रु को जीता तो अन्य चार शत्रु जीत लिए गए। उन पाँचों के जीतने पर दूसरे पाँच हार गए और फिर मैंने उन हजारों दुश्मनों को जीत लिया।'

केशीकुमार ने पूछा, `यह कैसे ?'

इस बात का समाधान करते हुए गौतम स्वामी ने कहा, `सर्वप्रथम मैं बाह्य भाव में डूबी हुई अपनी आत्मा को वश करता हूँ, आत्मा वश होते ही क्रोध, मान, माया और लोभ ये चार कषाय वश हो जाते है। इन चारों पर विजय होने पर पांच इन्द्रियों पर विजय पाना सरल हो जाता है...और फिर तो कोई भी दुश्मन सता नहीं सकता। आत्मविजय का यही मार्ग है।

केशीकुमार-इस दुनिया में कर्म के बन्धनों का पार नहीं है तो फिर आप उन बंधनों से कैसे मुक्त रह सकते हो ?

गौतम स्वामी ने कहा, `राग, द्वेष, मोह, परिग्रह, स्त्री तथा स्वजन की आसक्ति ही भयंकर बंधन है। उन बंधनों को तोडकर मैं आसानी से विकास मार्ग में आगे बढ़ सकता हूँ।'

केशीकुमार-`हृदय की गहराई में एक लता पैदा होती है जिसके ऊपर विषैले फल लगते हैं। आप उस विषलता को कैसे उखाड़ देते हो ?'

गौतम : हृदय की गहराई में आत्मघातक तृष्णा रूपी विषलता है। उसके फल मोक्ष की भावना को समाप्त कर देने वाले होते है। उसी के प्रभाव से जीव का संसार बढ़ता है और आत्मा जन्म मरण के चक्कर में निरन्तर दुःखी होती है। मैंने जिनेश्वर के शासन की आराधना द्वारा उस विषलता को मूल से उखेड़ दिया है, अतः मैं सुखपूर्वक रह सकता हूं।

केशी-हृदय की गहराई में सर्वनाशी अग्नि छुपी हुई है जो जीव की सुख-शांति को भस्म कर सतत जलाती रहती है, वह कौन-सी अग्नि हैं और उसे कैसे शांत कर सकते हैं ?

गौतम –जीव के साथ अनादि से जुड़े हुए कषाय ही वह अग्नि है। ज्ञान, शील और तप की जलधारा द्वारा वह अग्नि शांत हो जाती है और अंतर में सुख शांति पैदा हो जाती है।

केशीकुमार–मन रूपी घोड़ा साधक को उन्मार्ग की ओर ले जाता है, उसे आप कैसे रोक पाते हो ?

गौतम–मन रूपी चंचल घोड़े को मैं श्रुतज्ञान की लगाम द्वारा अंकुश में रखता हूँ, जिससे सारे तूफान शांत हो जाते हैं।

(क्रमशः)

प्रेरक कहानियाँ

लेखक :

प.पू.आचार्यदेव श्रीमद् विजय रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.

231. लाभ से लोभ

एक राजपुरोहित का पुत्र-कपिल था ! उसके पिता की मृत्यु हो गई थी । नयें पुरोहित के स्वागत को देख माँ रोने लगी । कपिल ने आश्वासन दिया ! पिता के मित्र इंद्रदत्त के पास पढने के लिए भेजा ! विद्याध्ययन के साथ शेठ के वहाँ भोजन व्यवस्था की गई । वहाँ किसी दासी के साथ संपर्क हुआ । किसी पर्वदिन धन की जरूरत पड़ी । परंतु धन नहीं होने से दोनों दुःखी हुए । दासी ने उपाय बताया । धनशेठ को आशीर्वाद देने पर वह दो मास सोना देता है । आशीर्वाद देने के लिए रात्रि में ही चल पडा । सैनिकों ने इसे चोर मान कर पकड़ा । राजा के सामने किया । सारी हकिकत बताई तब, प्रस्तुत राजा ने कहां, 'जो चाहे सो मांग लो । वह सोचने के लिए उद्यान में गया । दो-चार-आठ-हजार-लाख-करोड़ सोना महोर अर्द्धराज्य से भी अतृप्ति ही लग रही थी । कुछ क्षण में विचार बदल गया । संसार त्याग कर दीक्षा ले ली । आगे चलकर केवली बन गया ।

232. दान से सम्यक्त्व प्राप्ति

धनसार्थवाह ने व्यापार के लिए प्रयाण किया । साथ में धर्मघोष सू. आदि मुनि भी जुडा । मार्ग में भयंकर वर्षा होने लगी । भोजन की अव्यवस्था से लोक तो कंदमूल-फलाहार करने लगे । एक दिन उसे गुरु का स्मरण हुआ । उनके पास जाकर देखा तो सभी उपवास कर रहे थे । अपनी भूल की क्षमा मांगकर उसने गोचरी के लिए प्रार्थना की कुछ भी तैयारी नहीं होने से निर्दोष घी वहोराया, भाववृद्धि से उसे समकित की प्राप्ति हुई । वही धन सार्थवाह 13वें भव में ऋषभदेव तीर्थंकर बनें ।

233. दृढ़ श्रद्धा

धनपाल ने ऋषभदेव का चरित्र बनाकर भोज राजा को सुनाया । भोज राजा ने उसे तीन जगह के नाम बदलने को कहा । अयोध्या के बदलें धारा नगरी, ऋषभदेव के बदले महादेव तथा भरत के स्थान पर मेरा नाम लिख दो !

धनपाल ने कहा—कहां-कहां आम्र कहां बबुल ! राजाजी ! ऐसी समानता कैसे हो सकती है । राजा भोज ने गुस्से में वह पोथी सगडी में डाल दी । धनपाल को जीवन के अद्‌भूत सर्जन के सर्वनाश से खूब दुःख हुआ । धनपाल की पुत्री को वह ग्रंथ याद था उसे लिखकर पुनः तैयार किया गया । धनपाल कवि ने उस ग्रंथ का नाम अपनी पुत्री ने नाम पर रखा **'तिलक मंजरी'** ।

234. न्याय सम्पन्नता

विमलमंत्री एक प्रख्यात योद्धा था ! धर्मघोष सू. म. की देशना सुनकर द्रवित हृदय से पश्चात्ताप करते हुए बोला–भगवन् ! मैंने बहुत युद्ध किये हैं, मुझे मेरे पापों का प्रायश्चित्त प्रदान करो । गुरूदेव ने उसे कहा–आबु तीर्थ का उद्धार करों । विमलमंत्री द्वारा अंबिका देवी की आराधना की गई । देवी ने वरदान देते हुए कहा–या तो आबुतीर्थ उद्धार का बल मिलेगा अथवा संतान प्राप्ति होगी । विमलमंत्री ने तीर्थोद्धार का बल मांगा ।

अब जमीन का प्रश्न था, ब्राह्मणों की मालिकी थी ! बदले में ब्राह्मणों ने सोनामहोर पथराने की इच्छा जताई ! अनीति की जमीन नहीं चाहिये, अत: गोल सोनामहोर को समचोरस सोनामहोर बनाई और जमीन खरीद कर तीर्थोद्धार किया ।

235. अपूर्व त्याग

वीर निर्वाण के 700 वर्ष बाद आ. श्री प्रद्योतन सू. के शिष्य मु. श्री मानदेव वि. का आचार्य पदवी का समारोह, चल रहा था । विधि कराते समय गुरुदेव ने अचानक उनके स्कंध पर सरस्वती व लक्ष्मी को देखा । गुरूदेव के मन में शिष्य के पतन का संदेह पैदा हुआ । मानदेव वि. गुरू के भाव को समझ गयें और उन्होंने 6 विगई त्याग की प्रतिज्ञा मांगी, संतुष्ट हुए गुरूदेव ने इसके साथ ही आचार्य पदवी प्रदान की । आ. श्री मानदेवसूरिजी जैन धर्म के अजब प्रभावक बने ।

एक बार तक्षशिला में महामारी का भयंकर रोग हुआ । श्रावकों ने शासन देवी की आराधना की ! देवी ने कहा, **'मानदेव सू. के पास जाओं ।'** संघ के आग्रह से वीरचंद शेठ ने नाडोल हेतु प्रयाण किया ।

वीरचंद शेठ का नाडोल आगमन हुआ । आचार्यश्री के पास चार स्त्रियों को बैठी देख उनके चारित्र में संदिग्ध बना । तुरंत देवियों ने उसे चमत्कार बताकर समझाया । उसने क्षमा मांगी और प्रार्थना की । आचार्य भगवंत लघुशांति की रचना की और उसके मंत्रित जल से महामारी शांत हो गई !

236. संसार की विचित्रता

राजा जनक की पत्नी रानी विदेहा ने सीता और भामंडल रूपी युगल को जन्म दिया । जन्म के साथ ही वैरी देव के द्वारा भामंडल का अपहरण कर लिया गया और वैताढ्य पर्वत पर रथनुपुर उद्यान में त्याग किया गया । चंद्रगति राजा द्वारा उसे ग्रहण कर पुत्रवत् पालन किया गया । सीता के दिव्य रूप के दर्शनार्थ नारद का आगमन हुआ । दासी द्वारा नारद के अपमान से नारद को क्रोध आया । उसने सीता को कष्ट में डालने का निर्णय कर सीता के दिव्य रूप का चित्र बनाकर भामंडल को दिया और भामंडल उसमें अत्यंत आसक्त बन गया ।

कैसी संसार की विचित्रता ! एक भाई अपनी ही बहन के रूप में आसक्त हो गया ।

237. सुख किस बात का ?

एक गांव में एक शेठ ने अपना आलीशान बंगला बनाया, उसे बहुत ही आनंद था । कुछ ही दिनों के बाद उसके पास में ही उससे सुंदर बंगला बन गया । अब शेठ का आनंद उड़ गया । दूसरे के सुंदर बंगले ने शेठ के आनंद को लूट लिया । शेठ को ज्ञात हुआ कि पहले वह अपने बंगले के कारण सुखी नहीं था, बल्कि पास में झोपड़ा था, इस कारण सुखी था ।

238. पेथडशाह की भक्ति

अवंतिदेश का मंत्री पेथडशाह अत्यंत उदार और जिनधर्मी था ! ब्राह्मणों के एक क्षत्रिय साम्राज्य वाले देवगिरि नगर में जिनमंदिर बनानें की इच्छा हुई परन्तु वे ब्राह्मण अत्यंत मिथ्यात्वी और जैन धर्म के द्वेषी थे ।

पेथडशाह ने जगह पाने के लिए एक युक्ति की । ओंकार पुर में हेमादि मंत्री के नाम विशालदानशाला का निर्माण किया । भोजन आवास की सुंदर व्यवस्था व भक्ति करने सभी को आश्चर्य चकित कर दिया । तीन वर्ष में सवा करोड रुपयों का खर्च किया !

हेमाद्रि मंत्री की चारों ओर कीर्ति होने लगी ! जानकारी मिलने पर उसे खुब आश्चर्य हुआ जॉच पडताल करने पर पेथडशाह की यह योजना का ज्ञात हुआ । उसने पेथडशाह को आमंत्रण देकर सेवा के लिए अत्यंत आग्रह किया । पेथडशाह ने जमीन की मांग की । हेमाद्रि ने भी उसे आश्वासन दिया । एक बार राजा द्वारा वरदान मिलने पर हेमाद्रि मंत्री ने जमीन मांगी । जीवन मिलने पर पेथड़शाह ने सोना महोर का थाल भेंट दिया और ब्राह्मणों को भी दान दिया !

मंदिर हेतु जमीन खोदी तब मीठा पानी निकला । ब्राह्मणों को ईर्ष्या हुई–राजा को शिकायत की । तब पेथडशाह को खबर मिलने पर रात्रि में ही नमक की बोरिया डलवाकर पानी खारा करवा दिया और अंत में मंदिर का निर्माण करवाया !

भव्य प्रतिष्ठा महोत्सव हुआ । नगरजन व ब्राह्मणों को भी दान दिया गया । पेथडशाह की भक्ति के कारण अद्भूत शासन प्रभावना हुई ।

239. गुर्वाज्ञा पालन

कलिकाल सर्वज्ञ आ. श्री हेमचन्द्र सू. म. ने रामचन्द्र सू. को पट्टधर बनाया ! उनके स्वर्गवास के बाद बालचन्द्रमुनि ने पट्टधर बनना चाहा । वह अजयपाल का धर्मगुरू बन गया । अजयपाल ने रामचन्द्र सू. को कहा **'बालचन्द्र को पट्टधर बनाओ ।'** परंतु रामचन्द्रसूरीश्वरजी ने गुरू की आज्ञा न होने से इन्कार किया । गुस्से में आकर अजयपाल ने कहा या तो पट्टधर बनाओ नहीं तो तपी हुई तांबे की पाट पर सो जाओ ! गुरू आज्ञा के पालन के लिए मृत्यु को महोत्सव मानकर वे तपी हुई पाट पर सो गये । धन्य गुरु भक्ति !

(क्रमशः)

पश्चात्ताप की भाव यात्रा

3

संवेदना :–
सरस्वती नंदन पू.आचार्य देव श्रीमद् विजय
रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.

किं बाललीला कलितो न बाल ! पित्रोः पुरो जल्पति निर्विकल्प ।
तथा यथार्थं कथयामि नाथ ! निजाशयं सानुशयस्तवाग्रे ।।3।।

हिन्दी-भावानुवाद

जिस प्रकार सरल ह्रदयी बालक, क्या आगे-पीछे का विचार किए बिना अपने माता-पिता के सामने निवेदन नहीं करता है ? हे नाथ ! उसी प्रकार मैं भी आपके सामने, मैंने जो पापाचरण किया है, उसको पश्चात्ताप सहित प्रकट करता हूँ !

हिन्दी-काव्यानुवाद

माता-पिता के सामने, बोली सुनाकर तोतली, करता नहीं क्या अज्ञ बालक, बाल्यवश लीलावती ?
अपने ह्रदय के हाल को, त्यों ही यथोचित रीति से, मैं कहा रहा हूँ आपके आगे विनय से प्रीति से ।।3।।

गुजराती-काव्यानुवाद

शुं बालको मा-बाप पासे, बालक्रीडा नव करे ? ने मुखमां थी जेम आवे, तेम शुं नव उच्चरे ।
तेमज तमारी पास तारक, आज भोला भावथी, जेवुं बन्युं तेवुं कहुं, तेमां कशुं खोटु नथी ।।3।।

विवेचन

पाप के स्वीकार में बालक बनों !

लोक में कहावत है–**'मानव मात्र भूल का पात्र है'** To err is human परंतु जैन दर्शन कहता है कि **'छद्मस्थ मात्र भूल का पात्र है ।'**

जब तक आत्मा की छद्मस्थ दशा है, तब तक भूल होने की संभावना है ।

जब आत्मा मोहनीय कर्म को संपूर्ण नष्ट कर वीतराग बन जाती है, उसके बाद वह आत्मा कभी भी किसी प्रकार की भूल नहीं करती है ।

चार ज्ञान के धनी, समग्र द्वारशांगी एवं चौदह पूर्व के रचनाकार, प्रभु महावीर के प्रथम शिष्य गौतम स्वामीजी के जीवन में भी छद्मस्थ अवस्था में भूल हो गई थी ।

विक्रमराजा को प्रतिबोध करनेवाले सिद्धसेन दिवाकरसूरिजी म. के जीवन में भूल हो गई थी ।

1444 ग्रंथों के रचयिता प्रकांड विद्वान पू. हरिभद्रसूरिजी म. के जीवन में भी एक बार भूल हो गई थी । कलिकाल सर्वज्ञ हेमचन्द्राचार्यजी के जीवन में भी भूल हो गई थी । इतने बड़े महान ज्ञानियों के जीवन में भी यदि भूलें हो सकती है तो अन्य सामान्य व्यक्ति के लिए तो क्या कहना ?

भूल हो जाने के बाद उस भूल की सजा में से मुक्त होने का एक मात्र उपाय हैं–उन भूलों का हृदय से पश्चात्ताप करना और सद्‌गुरु या प्रभु के आगे उन भूलों का स्वीकार कर गुरु-प्रदत्त प्रायश्चित्त को वहन करना ।

प्रायश्चित्त स्वीकार करें

छद्मस्थ अवस्था में कदम कदम पर भूलें होने की आशंकाएं रहती है ।

भूल हो जाना इतना बुरा नहीं हैं, जितना भूल हो जाने के बाद उस भूल का स्वीकार न करना, बुरा है । मुनि जीवन को सफल बनाना हो तो अपने व्रत-महाव्रत आदि में लगे दोषों की शुद्धि अवश्य करनी चाहिए । भूल तो एक रोग के समान है । रोग का ख्याल आते ही उसका इलाज होना जरुरी है । रोग का इलाज न हो तो वह धीरे धीरे बढता जाता है । अतः डॉक्टर के आगे अपने रोग को प्रकट करने में ही अपना हित है ।

अपने संयम जीवन में होनेवाली भूलें रोग के स्थान पर है और उन रोगों के चिकित्सक गुरु भगवंत है । जाने-अनजाने में जो भी भूलें हुई हो, उन्हें सच्चे दिल से गुरु के आगे प्रकट करने में ही अपना हित रहा हुआ है ।

जीवन में मन, वचन और काया तीनों से पापों का सेवन होता है, अतः उन सभी प्रकार के पापों की शुद्धि होना जरुरी है ।

जीवन में सबसे ज्यादा पाप मन से होते हैं, उन पापों का भी शुद्धिकरण खूब जरुरी है ।

❊ रुक्मि राजा और लक्ष्मणा साध्वी आदि के मानसिक पापों का भी कितना कटु परिणाम आया । यह हम सब जानते ही हैं, अतः मन में लेश भी माया-कपट किए बिना अपने पापों का शुद्धिकरण अवश्य करना चाहिए ।

भूत काल में अपनी भूलों को छिपाने का कार्य तो बहुत बार किया है और ऐसा कर अपने दोषों को ही बढावा दिया है । भूलों को सुधारने के लिए इस जीवन में स्वर्णिम अवसर मिला है, अतः वह अवसर न चूके !

बालक की सबसे बड़ी विशेषता होती है–उसका मन साफ होता है ।

ठीक ही कहा है–'**बच्चे मन के सच्चे ।**' बालक को छल कपट करना नहीं आता है वह जो देखता है, वह बोल देता है ।

बालक अपने माता-पाति के आगे बाल-क्रीडा करता हैं, तब जो मन में अया, वह बोल देता है ।

बस, जीवन में हुई भूलों का प्रायश्चित्त करते समय बालक की तरह अपनी भूलों का स्वीकार करना चाहिये । जिसके मन में बालक सी सरलता नहीं होती है और जो पाप के स्वीकार में माया कपट करता है, उसकी आत्मा कभी शुद्ध नहीं बन सकती है ।

शांत सुधारस

जीवन में शांति का उपाय

विवेचनकार : **प.पू.आचार्यदेव श्रीमद् विजय रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.**

आत्मा का मौलिक स्वरुप

यह एक आत्मा ही भगवान है, जो ज्ञान-दर्शन की तरंगों में विलास करने वाली है। इसके सिवाय अन्य समस्त कल्पना मात्र है। ममत्व आकुल-व्याकुल करने वाला है।

अनित्य, अशरण तथा संसार भावना के बाद हम आत्मा के स्वरूप-चिन्तन रुप एकत्व भावना का विचार करेंगे। अनित्यादि भावनाओं में सांसारिक पदार्थों के स्वरुप का चिन्तन किया था। संसार भावना में आत्मा के परिभ्रमण का विचार किया, अब इस भावना में आत्मा का मूल स्वरुप क्या है ? और इसके परिभ्रमण का क्या कारण है ? इस सन्दर्भ में विचार करेंगे।

एकत्व भावना के सन्दर्भ में एक दृष्टान्त याद आ जाता है –

● एक भयंकर जंगल था। उस जंगल में अनेक जंगली जानवर रहते थे। एक दिन एक गर्भवती सिंहनी जंगल को पार कर किसी नगर के उपखण्ड में जा पहुँची। सिंहनी को प्रसूति की वेदना होने लगी और उसने अत्यन्त वेदना के साथ एक बच्चे को जन्म दिया। बच्चे के जन्म के साथ ही सिंहनी ने अपने प्राण छोड़ दिये। सिंहनी का छोटा सा बच्चा अपनी माँ के इर्दगिर्द बैठा था, तभी पास से एक गड़रिया निकला, उसने मरी हुई सिंहनी और पास में खड़े उस बच्चे को देखा। उसने सोचा- ``माँ के बिना सिंह का यह बच्चा मर जाएगा'' ऐसा सोच कर उसने उस बच्चे को कंधों पर उठा लिया और उसे अपने घर ले आया।

उस गड़रिये ने बड़े ही प्रेम से उसे दूध पिलाया। सिंह का बच्चा प्रसन्न था। गड़रिया अपनी भेड़ों के साथ उसे भी जंगल में चराने ले जाता। इस प्रकार आस-पास भेड़ ही भेड़ होने से वह सिंह का बच्चा भी अपने आपको भेड़ समझने लगा और उनके साथ घास-चारा आदि खाने लगा।

एक वर्ष व्यतीत हुआ। एक दिन गड़रिया अपनी भेड़ों को नदी पर पानी पिला रहा था, तभी पर्वत की चोटी पर खड़े एक सिंह ने भयंकर गर्जना की। सिंह की इस गर्जना को सुनते ही सभी भेड़ें भागने लगीं और सिंह का बच्चा भी उन भेड़ों के साथ भागने लगा।

सिंह ने अपनी आँखों से यह दृश्य देखा। **'भेड़ों की तरह यह सिंह क्यों भाग रहा है ?'**

इस प्रश्न ने उसे बेचैन कर दिया। सिंह तेजी से पर्वत के नीचे आया और उसने उस सिंह के बच्चे को रोक कर कहा-``तुम क्यों भाग रहे हो ? सिंह होते हुए तुम इतने डरपोक कैसे बन गए ?''

सिंह के ये प्रश्न सुनते ही सिंह का बच्चा विचार में पड़ गया-``मैं तो भेड़ हूँ, मुझे यह सिंह कैसे कह रहा है ?''

सिंह ने सोचा-``यह भ्रम में है, अतः इसे नदी किनारे ले जाना चाहिए।''

सिंह उस बच्चे को नदी किनारे ले गया और नदी के जल में उसने अपना तथा उसका प्रतिबिम्ब दिखलाया।

ज्योंही सिंह के बच्चे ने अपना प्रतिबिम्ब देखा, त्योंही वह उछल पड़ा ``अहो ! मैं भी सिंह हूँ-और इसके साथ ही उसकी दीर्घकाल से घर कर गई कायरता दूर भाग गई, शौर्य प्रकट हो गया और उसने सिंह की भाँति ही गर्जना कर दी।''

अब आप बतला सकोगे न कि उस सिंह के बच्चे में शौर्य कहाँ से आया ? जवाब यही होगा- ``जब उसे स्व स्वरूप का भान हो गया।'' स्व स्वरूप के ज्ञान के साथ ही सिंह के बच्चे की सुषुप्त शक्ति जागृत हो गई।

बस, इस एकत्व भावना में भी हमें यही जानने का है कि **'मैं एक आत्मतत्त्व हूँ'**, ज्ञान-दर्शन और चारित्र ही मेरी सम्पत्ति है। इसके सिवाय अन्य समस्त पदार्थ मुझ से भिन्न हैं।

अन्य पदार्थों में रही हुई ममता ही आत्मा को परेशान करती है।

पूज्य उपाध्याय श्री यशोविजयजी म. ने ठीक ही कहा है-

'अहं ममेति मन्त्रोऽयं, मोहस्य जगदान्ध्यकृत्।'

पर-वस्तु में **'अहं'** और **'मम'** की बुद्धि ही मोह का मंत्र है, जो समस्त जगत् को अंधा करने वाला है।

अपनी आत्मा तो अकेली है और अनन्त ऐश्वर्य सम्पन्न है। वह स्वयं सुख का महासागर है। इस सुख का कितना ही भोग किया जाय वह कभी समाप्त होने वाला नहीं है।

पर-भाव को पाने की लालसा में पड़ी हुई अज्ञान-दशा से पराधीन अपण्डित आत्मा, इन्द्रिय विषयों के आवेग के कारण पर-पदार्थों में भी आत्मबुद्धि (स्वकीयता-अपनापन) की कल्पना कर लेती है।

अज्ञानता का प्रभाव

अज्ञानता के कारण प्राणी इन्द्रियों के विषयजन्य सुख को सच्चा सुख मान बैठता है और फिर उसके पीछे दौड़धूप करता है। उसकी यह दौड़धूप निरन्तर चलती रहती है। परपदार्थ में वह आत्मबुद्धि कर उन्हें अपना मान लेता है। परपदार्थों में आत्मबुद्धि हो जाने के बाद वह उन पदार्थों को पाने के लिए दिन-रात मेहनत करता रहता है। कुछ मिल जाय तो उसके संरक्षण की चिन्ता में आकुल-व्याकुल रहता है। इस प्रकार सतत पर-भाव में रमणता के कारण वह अपना वास्तविक स्वरुप भूल जाता है और निरन्तर दुःख के गर्त में डूबता जाता है।

ठीक ही कहा है-

परस्पृहा महादुःखं, निस्पृहत्वं महासुखम् ।

पर-पदार्थों की स्पृहा-लालसा ही आत्मा को दुःखी बनाती है और उनके प्रति रही निस्पृहता आत्मा को सुखी करती है ।

परन्तु अज्ञानदशा के कारण आत्मा स्व-स्वरुप को जानने में अन्ध सी बन जाती है और भौतिक पदार्थों के पीछे दौड़धूप करती रहती है ।

रेती को पीस कर कोई तेल निकालना चाहे अथवा पत्तों का सिंचन कर वृक्ष को हरा-भरा रखना चाहे; यह कैसे सम्भव है ?

जो आत्मा से भिन्न हैं, उनके प्रति राग व आसक्ति से आत्मा कभी सुखी नहीं हुई है । उससे तो आत्मा विविध दुःखों की भोक्ता ही बनी है ।

पर-भाव में आत्मवत् बुद्धि होना ही सबसे बड़ी अज्ञानता है और यह अज्ञानता ही सर्व दुःखों की मूल है । कहा भी है-

धन भोगों की खान है, तन रोगों की खान ।
ज्ञान सुखों की खान है, दुःख खान अज्ञान ।।

पर-पदार्थों में रही हुई आत्मवत् बुद्धि को दूर कर स्वभाव में लीन बनना, यही परमानन्द की प्राप्ति का मार्ग है और उसी के लिए हमारा प्रयास होना चाहिए ।

पर-भाव में रमणता भयंकर है

जिस प्रकार परस्त्री में स्वस्त्री की कल्पना बुद्धिमान् पुरुष के लिए आपत्ति का कारण बनती है, उसी प्रकार अन्य वस्तु में अपनेपन की भावना (ममत्वबुद्धि) विविध पीड़ाओं को लाने वाली ही होती है ।

परस्त्री की ओर जो नजर करता है, उसके साथ संग करने के लिए प्रयत्न करता है, उसकी हालत खराब ही होती है । **'दशवैकालिक'** में ठीक ही कहा है-

जइ तं काहिसि भावं, जा जा दिच्छसि नारीओ ।
वाया विध्धुव्व हडो, अट्ठिअप्पा भविस्ससि ।।

सती राजीमती रथनेमि को कहती है कि-``हे रथनेमि ! यदि तुम इस प्रकार राग भाव का सेवन करते रहोगे तो जब-जब स्त्री को देखोगे, तब-तब पवन से स्फुरित होने वाली हड नामक वनस्पति की तरह तुम अस्थिर (आत्मा वाले) बन जाओगे ।''

अर्थात् जिसका मन परस्त्री में रंजित बना है, वह अपनी आत्म-स्थिरता खो देता है । उसके मन में नाना प्रकार के विकल्प चलते रहते हैं और इस प्रकार वह सदैव अशान्त-अस्थिर दशा में रहता है ।

परस्त्री व्यसनी की समाज में भी इज्जत नहीं होती है, लोग उसे हल्की नजर से देखते हैं।

बस, इसी प्रकार आत्मगुणों को छोड़कर पर-पदार्थों में ममत्व करना एकमात्र आपत्ति का ही कारण है। पौद्गलिक पदार्थ आत्मा से पर हैं। अतः परपदार्थ की ओर नजर डालना.....उनसे प्रेम करना यह परस्त्रीगमन की तरह ही है, जो अनेक आपत्तियों को लाने वाला है। इस संसार-भ्रमण का भी मुख्य कारण जो अपना नहीं है, उसमें अपनेपन की बुद्धि ही है।

परभाव में रमण की यह कितनी भयंकर सजा है कि **'अजन्मा'** स्वभाव वाले आत्मा को जन्म लेना पड़ता है। **'अमर'** स्वभाव वाली आत्मा को मरना पड़ता है।

हे मन ! चारों ओर से घिरे हुए पर-भाव रुप आवरण को तूँ दूर हटा दे, ताकि आत्मचिन्तन रुप चन्दन वृक्ष के पवन की उर्मि के रस का क्षणभर के लिए मुझे स्पर्श हो जाय ।।48।।

आत्मचिन्तन का आनन्द

शुभ-अशुभ विचारों का उद्गमस्थल मन ही है। आचार का मूल भी विचार ही है। अधिकांशतः मनुष्य की प्रवृत्ति उसके मन की वृत्ति के अनुसार होती है। किसी भी कार्य को साकार रुप देने के पूर्व सर्वप्रथम मन में विचार पैदा होता है। तत्पश्चात् मन के भाव वाणी द्वारा व्यक्त होते हैं और फिर वे विचार क्रियात्मक भाव धारण करते हैं।

परभाव में अपनी रमणता का मूल अपना मन ही है। मन यदि समझ जाय तो सद्विचार की ओर मुड़ सकता है। अतः मन को समझाते हुए पूज्य उपाध्यायजी कहते हैं कि हे मन ! तेरे चारों ओर पर-भाव की रमणता का मोटा-काला पर्दा रहा हुआ है, इस पर्दे को तू हटा दे। इस पर्दे के हटने के साथ ही तुझे स्वरमणता का आस्वादन होगा, जो चन्दन वृक्ष के पास से बहते हुए शीतल पवन की भाँति आनन्ददायी होगा।

आत्मस्वरूप के चिन्तन से जीवात्मा को चन्दन से भी अधिक शीतलता का अनुभव होता है। आत्म-रमणता के आनन्द की मस्ती कुछ और ही होती है, वह शब्दातीत है, उसे शब्दों में अभिव्यक्त नहीं किया जा सकता है। शक्कर के स्वाद को शब्दों मे कहना अशक्य है, उसी प्रकार आत्मानन्द की मस्ती को शब्दों से नहीं कह सकते हैं।

आत्मा तो अक्षय सुख का सागर है। उसके निकट जाते ही परम शान्ति की शीतल लहरों का अनुभव होगा।

अतः हे मन ! तू पर-भाव को छोड़ दे। आत्मा का जो वास्तविक स्वरूप है, उसका तू विचार कर, चिन्तन कर, जिससे तुझे परम आह्लाद की प्राप्ति होगी। एक क्षण भर का भी आत्मविचार परम शान्ति का बीज है, अतः तू उसी में डूब जा।

(क्रमशः)

शासन प्रभावना के समाचार

मरुधर रत्न, सरस्वती नंदन, जैन हिन्दी साहित्य दिवाकर **पूज्यपाद आचार्यदेव श्रीमद् विजय रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.** आदि ठाणा-5 एवं साध्वीश्री धर्मज्ञाश्रीजी आदि ठाणा-2 चातुर्मासार्थ श्री पिण्डवाडा जैन संघ में विराजमान है ।

प्रतिदिन प्रात: 9.45 बजे आराधना भवन में पूज्यश्री के प्रेरणादायी प्रवचन हो रहे है । सप्ताह के 4 दिन सिन्दूर प्रकर एवं 3 दिन भगवान महावीर की पट्टधर परंपरा के आधार पर **पूज्य आचार्यदेव श्रीमद् विजय रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.** के एवं प्रतिदिन प्रारंभ में 45 आगम के परिचय स्वरूप **मुनि श्री स्थूलभद्रविजयजी** के प्रवचन हो रहे है । श्री संघ में 45 आगम तप की आराधना सुन्दर रूप से चल रही है ।

दि. 6 अगस्त को दीक्षा दानेश्वरी पूज्यपाद आचार्यदेव **श्रीमद् विजय गुणरत्नसूरीश्वरजी म.सा.** की छठी स्वर्गारोहण पुण्यतिथि निमित्त प्रवचन दरम्यान उनकी गुणानुवाद सभा का आयोजन हुआ । मनीषभाई जैन, अशोकभाई मरडिया एवं मेहुलभाई-भिवंडी ने अपने मनोगत भावों को वक्तव्य और गुरूभक्ति गीत के माध्यम से प्रकट किये । अंत में पूज्यश्री ने स्वर्गस्थ आचार्यश्री के गुरूभक्ति आदि गुणों पर प्रकाश डाला । कार्यक्रम के बाद 30 रूपये एवं गुड की प्रभावना हुई । लगभग 100 तपस्वियों ने आयंबिल तप किये । तपस्वियों को 70 रुपये की प्रभावना हुई ।

समाधि पर्व

पिण्डवाडा रत्न श्रमणशिल्पी, सिद्धांत महोदधि पूज्यपाद **आचार्यदेव श्रीमद् विजय प्रेमसूरीश्वरजी म.सा.** के प्रथम शिष्य-पट्टधर परम शासन प्रभावक, सुविशाल **गच्छाधिपति पूज्यपाद आचार्यदेव श्रीमद् विजय रामचन्द्रसूरीश्वरजी म.सा.** की 35 वीं स्वर्गारोहण पुण्यतिथि के उपलक्ष में देव-गुरू भक्ति स्वरूप त्रिदिवसीय समाधि पर्व का भव्य आयोजन हुआ ।

महोत्सव के प्रथम दिन दि. 9 अगस्त को प्रात: 9.00 बजे आराधना भवन में विविध औषधियों के माध्यम से श्री वर्धमान शक्रस्तव महाभिषेक का आयोजन हुआ । विनयभाई पंडितजी ने बडे ही उत्साह पूर्वक अभिषेक का अनुष्ठान करवाया । अभिषेक हेतु बामनवाडजी तीर्थ से 25 Inch के श्री वासुपूज्य स्वामी प्रभुजी लाए गए । पूज्यश्री ने अभिषेक और शक्रस्तव महास्तोत्र की महत्ता समझायी।

अभिषेक का लाभ मातुश्री पानीबाई छोटालालजी मातुश्री विमलाबेन सुरेशभाई एवं सुकजीदेवी देवीचंदजी मनरूपजी परिवार वालों ने लिया । कार्यक्रम के बाद 50 रुपये की प्रभावना हुई ।

दि. 10 अगस्त को प्रात: 9.30 बजे ''**समाधि मरण भावयात्रा**'' का संवेदनात्मक कार्यक्रम हुआ । अहमदाबाद से पधारे संकेतभाई शाह ने महोपाध्याय श्री विनयविजयजी म.सा. द्वारा विरचित पुण्य प्रकाश के स्तवन में बताए समाधि मरण के 10 उपायों पर भावपूर्वक संवेदना प्रस्तुत की । संगीतकार विनयभाई ने सुमधुर संगीत प्रस्तुत किया ।

इसी के साथ जैन हिन्दी साहित्य दिवाकर **पूज्यपाद आचार्यदेव श्रीमद् विजय रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.** द्वारा अनुवादिक एवं संपादित 277 वीं पुस्तक **आओ ! संस्कृत सीखें भाग-3** का भव्य विमोचन कार्यक्रम हुआ । प्रारंभ में कांतिलालजी सांकल-चंदजी, पंडिवर्य शंभुदयालजी पांण्डेय, फुसारामजी प्रजापत, सुरेशजी मिलापचंदजी ने ज्ञान दीपक प्रज्वलन किया ।

फिर वरिष्ठ साहित्यकार शंभुदयालजी पाण्डेय ने संस्कृत व्याकरण की उपयोगिता एवं पूज्यश्री के हिन्दी साहित्य से हो रहे लाभों का वर्णन किया । फिर विनयभाई पंडितजी ने वक्तव्य प्रस्तुत किया ।

तत्पश्चात् रणजीतभाई छोटालालजी, अशोकभाई मेहता, जयंतिलालजी भूरमलजी, प्रवीणभाई मगनलालजी, शंभुदयालजी पाण्डेय, रमेशभाई चौपडा आदि ने पुस्तक का विमोचन किया ।

अंत में पूज्यश्री का प्रेरणादायी प्रवचन हुआ । कार्यक्रम के बाद 50 रुपये की प्रभावना हुई ।

दि. 11 अगस्त को प्रात: 9.00 बजे गाजते-बाजते श्री संभवनाथ जिनालय हेतु चैत्य परिपाटी हुई । तत्पश्चात् सकल संघ के साथ श्री प्रेमसूरि गुरुमंदिर में आकर विशाल गुणानुवाद सभा का आयोजन हुआ ।

प्रारंभ में पूज्यपाद आचार्यदेव श्रीमद् विजय रामचन्द्रसूरीश्वरजी म.सा. की तस्वीर के सामने सकल संघ के साथ गुरूवंदन एवं सामुहिक स्तुति गान हुआ । फिर बोरीवली से पधारे चेतनभाई मेहता ने गुणानुवाद सभा का संचालन करते हुए पूज्यश्री के अनेक जीवन प्रसंगों का वर्णन किये । बीच-बीच में संगीतकार विनयभाई ने भक्ति पद का मधुर गान किया । प्रविणभाई लांगठा, मनीषभाई जैन, सुरेशभाई एवं मुनिश्री शालिभद्रविजयजी तथा मु.श्री स्थूलभद्रविजयजी म. ने पूज्यश्री के गुणानुवाद किये ।

कालधर्म के समय प्रात: 10.10 बजे सूरिराम की तस्वीर पर अक्षत वधामणा किया गया ।

अंत में **पूज्यश्री आचार्यदेव श्रीमद् विजय रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.** ने स्वर्गस्थ दादा गुरूदेवश्री के गुणानुवाद किये । कार्यक्रम के बाद 50 रूपये की प्रभावना हुई । आज 160 आराधकों ने आयंबिल उपवास तप करके हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित की । आयंबिल एवं उपवास आराधको को 150 रूपये की प्रभावना की गई ।

दि. 12 अगस्त को पूज्य आचार्य भगवंत एवं बालमुनि श्री विमलपुण्यविजयजी ने गुणानुवाद किये ।

श्री नेमिनाथ प्रभु के अट्ठम तप

22 वें तीर्थंकर श्री नेमिनाथ प्रभु के जन्म दीक्षा कल्याणक निमित्त दि. 16 अगस्त से सामुहिक अट्ठम तप का आयोजन हुआ । प्रवचन में पूज्यश्री ने श्री नेमिनाथ प्रभु के जीवन चरित्र का मार्मिक वर्णन किया ।

दि. 17 अगस्त को प्रात: 9.00 बजे से गिरनार महातीर्थ भावयात्रा का आयोजन हुआ । इस भावयात्रा निमित्त गिरनार महातीर्थ की प्रतिकृति बनाई गई । अहमदाबाद से पधारे गौरांगभाई ने मार्मिक संवेदना प्रस्तुत की । साथ ही मुंबई से पधारे सनीभाई जैन ने मधुर संगीत में माध्यम से सभा को भावविभोर किया ।

इसी के साथ जैन हिन्दी साहित्य दिवाकर पूज्यश्री द्वारा हिन्दी भाषा में संपादित 278 वीं पुस्तक **'आओ ! संस्कृत सीखें (Guide Book)'** का विमोचन हुआ ।

दिनेशभाई देवीचंदजी, शांतिलालजी भूताजी (तखतगढ), साहित्यकार राजेन्द्रभाई डागा (उदयपुर) आदि ने ज्ञान दीप प्रज्वलन किया । फिर महेन्द्रभाई छोटालालजी, प्रकाशभाई धरमचंदजी, सुरेशभाई मिलापचंदजी, राजेन्द्रभाई डागा, शांतिलालजी भूताजी, विशालभाई, शांतिलालजी, विनयभाई आदि ने पुस्तक का विमोचन किया ।

फिर मनीषभाई जैन ने पूज्यश्री के हिन्दी साहित्य से हो रहे उपकारों का सुंदर वर्णन किया । साथ ही तखतगढ में आयोजित त्रिदिवसीय जीवित महोत्सव निमित्त शा. शांतिलालजी भूताजी परिवार ने पूज्यश्री को हार्दिक विनती की । पूज्यश्री उनकी विनती का स्वीकार किया । अंत में पूज्यश्री का प्रेरणादायी प्रवचन हुआ ।

दि. 18 अगस्त को श्री नेमिनाथ प्रभु के दीक्षा कल्याणक निमित्त प्रात: 9.30 बजे समुह सामायिक का आयोजन हुआ । श्री संघ में 46 आराधकों ने अट्ठम तप की आराधना की । सामुहिक रूप से उन्हें 1000 रुपये की प्रभावना की गई ।

दि. 20 अगस्त को श्री पार्श्वनाथ प्रभु के निर्वाण कल्याणक निमित्त शाम को 6.30 बजे श्री शंखेश्वर पार्श्वनाथ जिनालय में संध्या भक्ति का आयोजन हुआ ।

दि. 21 अगस्त को पिण्डवाडा के वर्धमान तप के 100 + 88 ओली के तपस्वी सुश्रावक संघवी पुखराजजी किस्तुरचंदजी के स्वर्गगमन निमित्त 101 आराधकों ने आयंबिल तप किये । संघवी परिवार की ओर से 188 रुपये की प्रभावना की गई ।

दि. 22 अगस्त को प्रवचन में पूज्य पंन्यास प्रवर श्री चन्द्रशेखरविजयजी की पुण्यतिथि निमित्त गुणानुवाद सभा का आयोजन हुआ ।

दि. 23 अगस्त को प्रवचन के बाद गाजे-बाजे के साथ श्री संघ के पगले श्री महेशकुमारजी नेनमलजी के गृहांगण में हुए ।

दि. 25 अगस्त को प्रवचन के बाद गाजे बाजे के साथ श्री संघ के पगले शा. रमेशचंदजी चुन्नीलालजी के गृहांगण में हुए ।

तप और तपस्वी वंदना

दि. 1 सितंबर को **सूरि प्रेम** के तपस्वी शिष्य 289 वर्धमान तप की ओली के भीष्म तपस्वी पूज्यपाद आचार्यदेव श्रीमद् विजय राजतिलकसूरीश्वरजी म.सा. की 28वीं स्वर्गारोहण पुण्यतिथि निमित्त गुणानुवाद सभा के साथ "**तप और तपस्वी वंदना**" का संवेदना एवं संगीतमय कार्यक्रम हुआ ।

संगीत हेतु सुरत से जीमीभाई पधारे । संवेदना हेतु अहमदाबाद से पधारे फेलिनभाई ने तपस्वी सम्राट् के जीवन चरित्र पर मार्मिक संवेदना प्रस्तुत की ।

अंत में प्रवचन देते हुए पूज्यश्री ने अपने परमोपकारी आचार्य भगवंत के जीवन प्रसंगों का वर्णन किया । कार्यक्रम के बाद 50 रुपये की प्रभावना हुई । आज 206 आयंबिल हुए । तपस्विओं को 300 रुपये की सामूहिक प्रभावना की गई ।

आगामी कार्यक्रम

दि. 27 सितंबर से नौ दिवसीय एकासना साहित नवकार जप ।

दि. 18 अक्टूबर से आसो मास की शाश्वती नवपद ओली ।

दि. 8 एवं 9 नवंबर-दीपावली महापर्व निमित्त 500 से अधिक छट्ठ तप की संभावित आराधना ।

प्रवचन मोती

प्रवचनकार : **प.पू.आचार्यदेव श्रीमद् विजय**
रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.

2031. जो नमस्कार के पात्रों को झुकता नहीं है, उसे हमेशा झुका रहना पडता है अर्थात् पशु योनि में जन्म लेना पडता है, जहां मस्तक सदा झुका हुआ रहता है ।

2032. नमस्कार हर जीव को नहीं करना है, परंतु पात्रता देख कर ही करना है ।

2033. सामर्थ्य योग का नमस्कार आत्मा को मोक्ष फल प्रदान करता है ।

2034. अनुकंपा दान में किसी भी जीव की उपेक्षा नहीं करनी है ।

2035. चतुर्विध संघ की भक्ति करनी है, जबकि धर्महीन और धनहीन की अनुकंपा करनी है ।

2036. अनुकंपा में दान देने से पुण्य का बंध होता है ।

2037. क्रोध को जीतने के लिए मैत्री भावना है, क्रोध हमारी प्रीति को नाश करता है ।

2038. मुर्दे का कोई भी संग्रह करना नहीं चाहता, हिन्दु जला देते हैं, मुस्लमान गाड देते हैं । वैसे ही क्रोध का भी संग्रह नहीं करना चाहिए ।

2039. क्रोध का संग्रह करने से वैर की गांठ बनती है, जो भवोभव चलती है ।

2040. वैर की गांठ तो केंसर की गांठ से भी खतरनाक है ।

2041. मान कषाय को नाश करने के लिए प्रमोद भावना है । जहाँ गुणवान का विचार आता है, वहाँ मान नहीं रहता ।

2042. जैसे दुःख में अधिक दुःखी को देखना है, सुख में भी अधिक सुखी को देखना है, तो गुणों में भी अधिक गुणवान को अवश्य देखना है ।

2043. जैसे लोह चुंबक, पास रहे लोह कणों को अपनी ओर खींच लेता है, वैसे ही प्रमोद भाव से गुण खींच कर चले आते हैं ।

2044. जिसको भूल बताने वाला कोई नहीं है, उसकी भाग्य दशा नष्ट हो गई है । उसका आत्म विकास अटक गया हैं ।

2045. भूल बताने पर भी मन प्रसन्न रहे, वही विकास का मापदंड है ।

2046. जैसे गृहस्थ जीवन में कहा जाता है कि, जिसके सिर पर सास नहीं उस बहु का शील सुरक्षित नहीं । वैसे ही संयम जीवन में गुरु की निश्रा के बिना शिष्य का जीवन सुरक्षित नहीं है ।

2047. भूल बताने वाले पर गुस्सा आ जाता है, तो वह हमारी सबसे बडी कमजोरी है । (क्रमशः)

मरुधररत्न, गोड़वाड़ के गौरव, जैन हिन्दी साहित्य दिवाकर, सरस्वती नंदन,

पूज्य आचार्यदेव श्रीमद् विजय **रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.**

आदि ठाणा-5 का

पिण्डवाडा चातुर्मास बाद आगामी संभावित कार्यक्रम

दि. 3, 4 व 5 जनवरी 2027 तखतगढ में	**मातुश्री भाग्यवंतीबेन एवं पिताश्री शांतिलालजी भूताजी का त्रिदिवसीय जीवित महोत्सव एवं उद्यापन ।**
दि. 16 से 27 जनवरी 2027 कांकरोली (राजसंमद में)	**1) श्रीमती सरसोबाई हरकचंदजी कोठारी (बाली) परिवार निर्मित 'श्री भद्रंकर रत्नत्रयी आराधना भवन'** का उद्घाटन समारोह एवं **2) शाश्वत परिवार दीपक ज्योति टॉवर-मुंबई** द्वारा स्वद्रव्य से निर्मित **'श्री शंखेश्वर पार्श्वनाथ जिनालय'** की अंजन शलाका एवं प्रतिष्ठा महोत्सव ।
दि. 4 से 8 मार्च 2027 तक शंखेश्वर महातीर्थ में	सरस्वती नंदन, बाली रत्न पूज्य आचार्यदेव **श्रीमद् विजय रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.** के संयम सुवर्ण वर्ष की निर्विघ्न पूर्णाहूति निमित्त सामूहिक अट्ठम तप के साथ प्रभु भक्ति गुरु भक्ति महोत्सव । फिर

शत्रुंजय महातीर्थ की ओर मंगल विहार

समुदाय के ज्येष्ठ पूज्यों के आशीर्वाद पूर्वक कस्तुरधाम-नीलम विहार-पालीताणा में भद्रंकर परिवार आयोजित चातुर्मास एवं उपधान तप निश्चित हुआ है ।
चातुर्मास दरम्यान आसो सुदी-10, दि. 10-10-2027 से महामंगलकारी उपधान तप का शुभारंभ होगा ।

RNI No. MAHHIN/2000/00860 • Postal Reg. No. MCS/125/2024-26 • WPP License No. MR/TECH/WPP-285/South/2024-26
Posted at Patrika Channel STG Office Mumbai-1 • Date of Pub. 12 Day of every month • Posting Date 15th of every month

गिरनार महातीर्थ भावयात्रा

पुस्तक विमोचन

समुह सामायिक

तप और तपस्वी वंदना

If undelivered please return to : DIVYA SANDESH PRAKASHAN
Office No.304, 3rd floor, Bay Vue Building, Wing--East Bay,
Dr.M.B.Velkar Street,Kalbadevi, Mumbai-400002.

To,

From :

Published and Printed by : SURENDRA JAIN on behalf of DIVYA SANDESH PRAKASHAN
Printed at : SOMANI PRINTING PRESS, Gala No. 3-4, Amin Ind. Estate, Sonawal Cross Road No. 2, Goregaon (E), Mumbai-400 063. and Published from : Office No.304, 3rd floor, Bay Vue Building, Wing--East Bay, Dr.M.B.Velkar Street,Kalbadevi, Mumbai-400002. EDITOR:SURENDRA JAIN